Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies,
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2016 = 6.17, www.srjis.com
UGC Approved Sr. No.45269, JULY-AUG 2017, VOL- 4/35

lLdr d ie[k ukVdk e L=h&n'kk ,d ifj'khyu

iYyoh flg, **Ph. D.**

वरिष्ठ प्रवक्ता (संस्कृत), के.आर.महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मथुरा

Scholarly Research Journal's is licensed Based on a work at www.srjis.com

''साहित्य समाज का दर्पण है।'' समाज जिस प्रकार का होगा वह उसी भांति साहित्य में प्रतिबिम्बित रहता है। समाज के रूप–रंग, वृद्धि–हास, उत्थान–पतन, समृद्धि दुर्वस्था के निश्चित ज्ञान का प्रधान साधन तत्कालीन साहित्य होता है। अरस्तु का कहना है कि ''नाटक जीवन का प्रतिनिधित्व करता है।'' जीवन के यथार्थ स्वरूप के चित्रण के साथ–साथ उसकी सार्थकता को समाज के समक्ष प्रस्तुत करना कवि का प्रमुख उद्देश्य होता है। इस आदर्श के निर्वहन हेतु कृत संकल्प कवि समाज के विभिन्न पक्षों को हमारे सामने उद्धृत करने के उद्देश्य से विशिष्ट पात्रों का सृजन करता है।

विभिन्न स्मृतियों एवं धर्मसूत्रों में तत्कालीन भारतीय नारी की स्थिति का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त होता है। स्मृतियों में ही सर्वप्रथम नारी की स्वतंत्रता पर नियंत्रण लगाया गया जबकि वेदों में स्त्री को समानाधिकार एवं पुरूष की समकक्षता प्राप्त थी। वह शनैः–शनैः वैदिक काल से उत्तर स्मृति–काल तक उपनयन संस्कार से वंचित कर दी गई और उसका एक मात्र धर्म पारिवारिक कर्तव्यों की पूर्ति करना रह गया।

समयानुसार अनेक उत्थान–पतन से गुजरी भारतीय नारी के विविध पक्षों को तथा उसके जीवन के विविध आयामों को संस्कृत नाटक में स्थान प्राप्त हुआ। प्राचीन भारतीय नारी की स्थिति के मूल्यांकन का एक सार्थक प्रयास इन नाटकों में सृजित नारी पात्रों के आधार पर किया जा सकता है।

नाटक की क्रमशः उन्नति अवनति व पुनरोत्थान का प्रत्यक्षतः सम्बन्ध तद्युगीन साहित्य में चित्रित नारी–पात्रों से रहा है। प्राचीन काल में नारी सम्माननीय स्थिति को प्राप्त थी यह आदर्श प्रत्यक्षतः साहित्य में परिलक्षित होता है। मध्यकालीन भारत में नारी की स्थिति शोचनीय हो गयी, जहाँ यह अपने अस्तित्व को संघर्षरत दृष्टिगोचर होती है। आधुनिक युग में नारी को पुनजागरण हेतु प्रयासरत पाते हैं।

कालिदासीय पूर्ववर्तीय नाटककारों में भास एवं शूद्रक प्रमुख है। भास विरचित प्रतिज्ञायोगन्धरायणँ एवं 'स्वप्नवासवदत्तम्' नाटक में वासवदत्ता और पदमावती प्रमुख नारी पात्र है। ये उच्च वैचारिक आदर्शो की जीवन्त प्रतिमूर्ति है। नारी परिवार की केन्द्र थी। सृष्टि के आदिकाल से आज तक उसका यह अधिकार रहा है। यह कहना अतिशयोक्ति नही होगा कि इस युग में नारी पुरूष के समानाधिकार की अधिकारिणी थी। नारी केवल निष्क्रिय, अधीनस्थ दासी नहीं थी कि वह आज्ञा पालन

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

करे वरन उसे सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक क्षेत्र के सदृश राजनीतिक क्षेत्र में भी योगदान देने की स्वतंत्रता थी। राजनीति में नारी का सक्रिय एवं प्रत्यक्ष सहयोग तो नही रहा किन्तु उसने अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक संघर्ष एवं उथल–पुथल को जन्म अवश्य दिया। प्रतिज्ञायौगन्धरायणं में वासदत्ता का अपहरण उदयन और राजा महासेन के मध्य संघर्ष की स्थिति उत्पन्न कर देता है। स्वप्नवासवदत्तम् में यौगन्धरायण की योजना को सफल बनाने में वासवदत्ता ने अपना पूर्ण सहयोग दिया। वैवाहिक सम्बन्धों का मुख्य ध्येय राजनैतिक सुदृढ़ता को बनाना था। तद्युगीन नारी उदात्त चरित्र की परिचायिका थी। वासवदत्ता राज्योचित कार्यो के सुगम निर्वहन हेतु अपने पति उदयन का परित्याग कर वही राजकुमारी पदामवती पत्नी के रूप में उदयन के प्रति समर्पित है। उसमें अपूर्व सौन्दर्य पर भी गर्व की गन्ध मात्र नहीं है। वह उच्च पद पर आसीन होकर भी गुरूजनों के प्रति सर्वदा नतमस्तक है, रोष का कारण होने पर भी र्मादित व्यवहार करती है। वासवदत्ता से वह भगिनीवत् प्रेम करती है और सहजतः उसे अपनी स्वामी की अर्द्धागिनी रूप में स्वीकारती है। ये भासयुगीन नारी के उच्च आदर्श को परिलक्षित करता है।

गृहस्थ–जीवन के दायित्व से युक्त हो, स्त्री, जीवन के अंतिम चरण में मोक्ष को इच्छित तपोवन में निवास करती। तपस्वियों का जीवन सामान्य जनसाधारण के जीवन से भिन्न होता था।

शिक्षा पर विशेष बल नहीं दिया जाता था। नृत्य संगीत एवं ललित कला हर कन्या के लिए आवश्यक माना गया। कन्या सुयोग्य वर को प्राप्त करे यही उसकी शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य माना जाता। अवगुण्ठन ने समाज में स्थान नहीं ग्रहण किया था। यह मात्र गुरूजनों के समक्ष सम्मान स्वरूप स्त्रियाँ धारण करती थी। संभ्रान्त परिवार में विवाह के अवसर पर तथा सार्वजनिक स्थलों पर घूँघट का प्रयोग होता था।

शूद्रक ने स्वकालीन सत्यता व्यक्त करने में क्रान्तिकारी कदम उठाया है। आख्यान तथा वातावरण की यथार्थवादिता और नैसर्गिकता के कारण ही मृच्छकटिक पाश्चात्य और भारतीय आलोचकों की विपुल प्रशंसा का भाजन बना हुआ है। तत्कालीन समाज में जाति प्रथा थी जहाँ उच्च मध्यम श्रेणी की नारी पात्रों का चित्रण प्रमुख रूप से और निम्न श्रेणी की स्त्रियों का चित्रण गौण रूप से किया गया है। ब्राह्मण का स्थान सर्वोपरी था। सामान्य नारी पात्रों में घूता जैसी पतिव्रता स्त्रियाँ है, जो पति के अनुरूप आचरण कर सांसारिक बाधाओं का सामना करते हुए पति की चारित्रिक दुर्बलताओं की अवहेलना कर एक निष्ठ हो अपने पतिव्रत धर्म का पालन करती है। वहीं समाज में वेश्या प्रथा प्रचलित थी।

ये वेश्या दो प्रकार की थी गणिका और वेश्या। गणिकायें संगीत आदि के माध्यम से लोगां को खुश कर धर्नाजन करती थी। वसन्तसेना भी इसी प्रकार की गणिका है। उसके पास विलुल वैभव विलास की सामग्रियां थी। वेश्याओं से सम्बन्ध रखना सर्वजनमानस के लिए साधारण बात थी किन्तु समाज में यह प्रतिष्ठित नहीं था। इन वेश्याओं को नगरवधु कहा जाता था।

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

दासप्रथा और बंधकप्रथा प्रचलित थी। स्त्रियों का क्रय–विक्रय होता था। मदनिका एवं रदनिका जैसी स्त्रियाँ दासी है। वसंतसेना की दासी मदनिका को दासत्व से मुक्त करवाने हेतु शर्विलक वसंतसेना की धन देता है। कुछ साहसिक एवं क्रांतिकारी पुरूषों द्वारा इन वेश्याओं एवं दासियों से विवाह की जाती थी। चारूदत्त वसंतसेना से और शर्विलक मदनिका से ब्याह करता है और उन्हें वधू की उपाधि दी जाती है। वस्तुतः स्त्री पत्नी के आदर्श एवं सम्मानित स्थान को प्राप्त कर ही समाज में आदर की पात्र होती थी।

पर्दा–प्रथा प्रचलित नहीं था। वसंत सेना द्वारा वधू बनाई गई मदनिका भी पर्दा नही करती है। उसे वधू शब्द का अवगुण्ठन दिया गया है। अन्त में वसन्तसेना को भी वधू बनाया गया है परन्तु पर्दा का कोई संकेत नहीं है। सती–प्रथा का प्रचलन नहीं था किन्तु विधवा का जीवन कठोर नियम आचरण का बन चुका था। इस जीवन की परिकल्पना मात्र से भयभीत घूता आत्मदाह को उद्धत् होती है। व्यावहारिक शिक्षा के आधार पर व्यक्तिगत आचरण पर बल दिया जाता ताकि जनसाधारण सुसंस्कृत एवं व्यवहार कुशल हो। सामान्य नारी को नृत्य, संगीत के साथ गृहकार्य में कुशल होना आवश्यक था, वही गणिकाएं सर्वगुण सम्पन्न उच्चशिक्षा प्राप्त होती थी।

कालिदासीय नाटकों में अभिज्ञान शाकुन्तलं उनकी चतुर्मुखी काव्य–प्रतिभा की परिचायिका है। कालिदास ने अपने नाकों में स्त्री पुरूष की समकक्षता पर बल दिया है। पुरूष जहां गृहस्वामी था, वहीं स्त्री गृहस्वामिनी मानी गयी थी। पिता का कार्य पारिवारिक धन–जन की रक्षा, आवश्यक भौतिक सुख साधनों एवं आवश्यकताओं का संचय करना था वहीं माता का कार्य सभी सदस्यों की ममतापूर्ण देखभाल, बच्चों का लालन पालन, यज्ञ होम, दान एवं अन्य कार्यों में पिता की सहभागिनी होना था। आतिथ्य सत्कार में भी दोनों की सहभागिता थी। प्रियंवदा, अनुसूया और शकुंतला महर्षि कण्व की अनुपस्थिति में भी राजा दुष्यन्त का यथोचित सत्कार करती है। अतिथि– सत्कार देव–पूजन सदृश माना जाता था। धर्म मानवीय जीवन का महत्वपूर्ण अंग माना जाता था, यज्ञ मानों इसका केन्द्र था। 'सहधर्मचारिणी' यह शब्द ही धार्मिक जीवन में स्त्री की बराबरी का स्थान व्यक्त करता है। कालिदास ने पत्नी को धार्मिक क्रियाओं में समानाधिकार प्रदान किया। ग्राहस्थ्य जीवन व्यतीत करने की स्वतंत्रता स्त्री पर थी, प्राचीनकाल में सद्योद्वाहा एवं ब्रह्मवादिनी स्त्री होती थी। सद्योद्वाहा ऐसी स्त्री थी जो शिक्षा समाप्ति के पश्चात् विवाह करती एवं दूसरी ब्रह्मवादिनी जो आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत धारण करती थी। शकुन्तला प्रियंवदा अनसूया तपोवन में निवास करती है परन्तु शिक्षोपरान्त योग्यवर का वरण कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करती है। वहीं गौतमी साध्वी स्त्री है। साध्वी स्त्रियों का वर्णन बहुत कम मिलता है परन्तु प्रारम्भ से मुनि आश्रमों में पायी जाती थी। यह आश्रम में शिक्षा और संस्कृति ग्रहण करती थी। माता–पिता द्वारा जन्म से परित्यक्त इन अनाथ कन्याओं को ऋषि कुलों में शरण मिलता था। ये धर्म साधन में लगी

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

रहती थी समाज में भी इनका सम्मान था, ऋषि पिता इनका पालन–पोषण कर गृहस्थाश्रम के नियमानुसार विवाह करते थे।

विवाह समाज का महत्वपूर्ण घटक था। विवाह, राजनैतिक, सामाजिक और धार्मिक दृष्टि से अत्यावश्यक माना गया था। धर्मशास्त्रों के अनुसार युवावस्था में स्त्रियों की योग्यवर से शादी आवश्यक है। हिन्दू–विवाह जीवन पर्यन्त का धार्मिक बन्धन है जो अटूट होता था। विवाह के साथ सामाजिक स्वीकृति आवश्यक थी। यद्यपि गान्धर्व विवाह का प्रचलन था परन्तु माता–पिता प्रजापत्य विवाह या ब्रह्म विवाह को ही श्रेष्ठ मानते और यही समाज द्वारा भी मान्य था। बहु विवाह राज–परिवारों में और सामन्त परिवारों तक ही सीमित था सामान्य जन बहुपत्नी में विश्वास नहीं रखता था। राजवाड़ों में रानियाँ, पटरानियाँ या मुख्य रानियाँ होती थी। कालिदास की दृष्टि में कुटुम्ब में स्त्री का स्थान पुरूष के समान ही महत्वपूर्ण है। स्त्री कुटुम्ब के साथ–साथ अप्रत्यक्षतया समाज का आधार है। कुटुम्ब में नारी का एक जिम्मेदार एवं कर्तव्य निष्ठ स्थान है। शकुन्तला की विदाई के समय ऋषि कण्व द्वारा अभिहित कर्त्तव्यपरायण वचन वधु के धर्म द्योतित करते है। हर विषम परिस्थित में परिवार के सदस्यों से सहानुभूति रखना पति यदि प्रमाद करे भी तो उसका सहसा विरोध न करना आदि समाज में गृह को व्यवस्थित रखना, स्त्री का मूल कर्तव्य है। यह वर्तमान युग में भी कुटुम्ब को सुव्यवस्थित रखने में महत्वपूर्ण घटक है।

स्त्री की रक्षा उसका सम्मान और उस पर होने वाले अन्याय का प्रतिकर करना कुटुम्ब एवं समाज का कर्तव्य है। कालिदासीय साहित्य में सृजित स्त्री–पात्र जितनी शालीन है उतनी ही सुसंस्कृत एवं आत्मसम्मान को सुरक्षित रखने वाली है। जो आदर्श नारी समाज के समक्ष रखे गए वो सीता सावित्री और दमयन्ती के थे। नारी ने इन आदर्शो का स्वेच्छा से वरण किया और वह अपनी अस्मिता के प्रति सजग रही। शकुन्तला दुष्यन्त को छोड़ अन्यत्र जाती नहीं दिखाई गई कालिदास ने कोई नारी चित्रण ऐसा नही किया जो नारी को उसके उच्च आसन से पतित कर दें।

पर्दा–प्रथा को उदभव नहीं हुआ था। ये विशेष रूप से अग्रजों के प्रति सम्मान में स्त्रियों धारण करती थी। कालिदास के नाटक से ज्ञात होता है कि दुष्यन्त की राजसभा में पहुँचकर शकुन्तला ने अपने मुख ढक लिया और बाद में उसे हटा दिया। साधारणतः समाज में नारी के लिए परदे का प्रचलन नहीं था। विवाहोपरान्त घूँघट की प्रथा का प्रचलन था। उच्च–शिक्षा भी प्रचलित थी। शकुन्तला प्रणीत प्रेमपत्र और उसके द्वारा प्रयुक्त शब्दों से उसके बौद्धिक उच्चयता एवं प्रवीणता का प्रमाण मिलता है। आश्रम में निवास करने वाली स्त्रियाँ सुसंस्कृत एवं सुशिक्षित होती थी।

कालिदासीय परवर्तीय नाटककारों में श्री हर्ष भवभूति एवं भटनारायण प्रमुख है। सामाजिक मूल्यों का अवमूल्यन प्रारंभ हो गया था। समाज के वैचारिक स्तर में पतन ने नाटकों को भी प्रभावित किया। कुछ कवियों द्वारा इसके यथार्थ स्वरूप का चित्रण किया गया। वहीं दूसरी ओर इसकी विषम स्थिति की

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

भयावह परिणाम से सशंकित नाटककार ने अपने नाट्यसाहित्य में समाज को पुनः आदर्श समाज की स्थापना हेतु उद्‌बोधित किया।

राजा श्री हर्षवर्धन रचित नाटकों में राजपरिवारों के सामन्त एवं सम्भ्रान्त व्यक्ति ही प्रायः चित्रित हुए है। यहां रत्नावली नायिका की नाटिका प्रमुख रानी वासदत्ता भास की नायिका के स्वभाव के विपरीत सकुंचित मानवीय भावनाओं से ग्रसित है। राजा भी उच्च आदर्श का निर्वहण न कर, मुक्त हो, उच्श्रृंखल प्रेम प्रदर्शन करते है। राजप्रसादों में स्त्रियाँ स्वच्छन्द विहार करती थी और ये विविध उत्सवों एवं समारोहों में भाग लेती तथा मदिरा पान आदि भी करती थी। वस्तुतः स्त्री–पात्रों का नैतिक पतन प्रारम्भ हो गया था।

कन्याओं का विवाह उचित आयु प्राप्त कर लेने पर किया जाता था। माता पिता इच्छानुसार पुत्री के लिए सुयोग्य वर का चयन करते थे। स्वतन्त्र रूप से गान्धर्व विवाह करने की भी प्रथा प्रचलित थी। स्त्रियों का समाज में पर्याप्त आदर भी था। नागानंद में कवि ने आदर्श को नाटक का आधार माना है। विवाहित स्त्रियों को देखना भी लोग पाप समझते थे। किन्तु कन्याओं को देखने में दोष नहीं माना जाता था। कन्या को पर्याप्त स्वतन्त्रता थी। वे पर्दा नहीं करती थी। परिवार के सदस्यों में परस्पर अत्यन्त प्रेम रहता था। माता पुत्रों के लिए प्राण न्योछावर करने को उद्यत रहती थी।

पुरूषों की भाँति कन्याओं को भी शिक्षित किया जाता था। उन्हें नृत्य गीत चित्रांकन आदि ललित कलाओं के साथ ही गृहोपयोग में आने वाली सारी जानकारी दी जाती थी। स्त्रियाँ पति कल्यानार्थ देवपूजन करती तथा उसकी प्रणय अनुकूलता के लिए कामदेव का पूजन करती थी। ऐसा विश्वास था कि कामदास के प्रसन्न रहने पर वैवाहिक जीवन प्रेमपूर्ण रहेगा। वस्तुतः राजा बहुविवाह करने में विश्वास रखता था तथा वह अपने राजोचित स्वभाव के विपरीत सेविकाओं से भी प्रेम करने में संकोच नही करता था। इस प्रकार यद्यपि नागांनद में कवि ने आदर्श को समाज के समक्ष रखा है परन्तु वहीं उनकी प्रारम्भिक नाटिका रत्नावली सामाजिक जवीन के विविध पक्षों का सार्थक चित्रण करती है।

सामाजिक परिवर्तन को ललायित कवि भवमूति ने सीता के चरित्र को नारी के आदर्श रूप में चित्रित किया है। पत्नी व माता के रूप में स्त्रियों ने न केवल सम्मान अर्जित किया वरन यही वह रूप था जिसे समाज के हर युग में सम्मानित दृष्टि से देखा गया। स्त्री, स्वदेह और सन्तान ये तीनों मिलकर ही पुरूष पूर्ण होता हैं। धार्मिक कार्यों में सफलता क लिए पत्नी का सहयोग अपेक्षित था। राम यज्ञ में सीता की स्वर्णमूर्ति बनाकर यज्ञ सम्पन्न करते है। भवभूति के रूपकों में भी नारीत्व एक अत्यन्त ही महनीय एवं गिरमामय तत्व है जो समस्त जगत को पवित्र करता है। आदर्श नारी के जन्म से यह पृथ्वी धन्य होती है। तत्कालीन नारी ने स्वपीडा के बोध और स्वार्थ को तिलांजलि देकर दूसरों के दुःख से व्यथित होना और कठोर अपराधी को भी हृदय से क्षमा कर देना अपने नारीत्व का आदर्श माना सीता के चरित्र के माध्यम से भवभूति ने भारतीय नारी के इसी उच्च आदर्श की पुर्नप्रतिष्ठा की हैं।

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

स्त्री गृहलक्ष्मी है, पति के नेत्रों के लिए अमृत स्वरूप है। उसका स्पर्श पति पर गाढ़े चंदन लेप स्वरूप होता है। पुरूष का जीवन स्त्री के बिना निस्सार माना गया। पत्नी–पति का परस्पर समाज में बन्धुवत् मित्रवत संगिनी व सर्वस्व सा सम्बन्ध था। इस युग में पत्नी को धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का साधन माना जाता था। पत्नी से युक्त पुरूष समादृत और विश्वसनीय होता था। यद्यपि पत्नी को गृह क्षेत्र में अधिकार था। उसकी रक्षा और भरण–पोषण का दायित्व पति पर था। स्त्री घर की स्वाभिनी होती और पति के हृदय की साम्रज्ञी कही जाती थी। स्त्रियों का पतिव्रत धर्म ही उनका सर्वस्व होता था। वह पति को परमेश्वर की तरह श्रद्धेय मानती थी। प्राय स्त्रियाँ सद्चरित होती थी। परन्तु समाज स्त्रियों के चरित्र के प्रति सशंकित रहता था। विधि की विडम्बना थी कि उसे लोक निन्दा का भाजन बनना पड़ना था। लोक स्त्रियों के साधुत्व के विषय में संशयशील होते थे। सीता को अग्नि परीक्षा देनी पड़ी थी। इस समय विदूषी स्त्रियां भी थी जैसे अत्रेयी, अगस्त्य आश्रम में वेदाध्ययन करती है। सहशिक्षा का भी प्रचलन समाज में हो गया था। यद्यपि लड़कियों के उन्मुक्त शिक्षण का कोई संकेत नहीं मिलता परन्तु घर में संगीत, ललित कला आदि की शिक्षा दी जाती थी। इस प्रकार भवमूति के समय में नारी का सम्मानपूर्ण स्थान था।

भट्टनारायण की रचना वेणी संहार में प्रमुख पात्र, द्रौपदी, भानुमती एवं गान्धारी है। भानुमती का चरित्र सहृदय है। वह तद्युगीन भारतीय नारी के कोमलपक्ष को उजागर करती है। पतिव्रता पत्नी भानुमती, दुर्योधन के भावी अमंगल की कल्पना से सशंकित वह सतत पति के कल्यानार्थ देव अर्चना पूजन आदि करती रहती है। उसमें जितना लालित्य है, उसके विपरीत द्रौपदी के चरित्र में औदात्य है। पहली बार कोई नारी चरित्र इस प्रकार उग्र व प्रतिशोधाग्नि में दग्ध होने को व्याकुल दृष्टिगोचर होती है। पुरूष प्रधान समाज में भी वह अपने अस्मिता को बनाये रखने को उद्यत युधिष्ठिर की न्यायप्रियता को दुर्बलता का ही पर्याय मानती है। जो भरी सभा में पत्नी का तिरस्कार होते देखता है। द्रौपदी भरी सभा में पराक्रमी पतियों के आँखों के समक्ष अपमानित तिरस्कृता और विदलिता नारी की प्रतिमूर्ति है। उसमें क्रोध का तीव्र आवेग होना स्वाभाविक ही है। स्त्री होते हुए भी वह पौरूष से मण्डित है। द्रौपदी तद्युगीन परिवर्तन का द्योतक है। सामाजिक परिवर्तन को कृतसंकल्प नाटककार द्रौपदी के चरित्र के माध्यम से नारी जीवन के संघर्ष को नाटक में स्थान दिया है। राजनीतिक सत्ता में सहभागी न होते हुए भी द्रौपदी सर्वदा अपने पतियों के लिए प्रेरणा स्त्रोत रही है। उन्हें उद्बोधित कर विजयश्री की ओर अग्रसारित करना ही द्रौपदी की कर्मठता और सक्रियता को उजागर करती है। इस प्रकार नारी की सामाजिक भूमिका में हुए परिवर्तन को नाटक के सतत् विकास के साथ–साथ हम देख सकते है।

उपर्युक्त विवेचन से यही निष्कर्ष निकलता है कि नारी के प्रति आलोच्य नाटककारों और साहित्यकारों का दृष्टिकोण अतीव उदार एवं विशद रहा है। समाज में नारी की हासोन्मुख अवस्था देखकर उनका अन्त चीत्कार कर उठा रोम–रोम द्रवित हो गया। उसके उत्कर्ष एवं उत्थान को उन्होंने

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

नाटकों का लक्ष्य बनाया। नारी के प्राचीन 'देवीवाद' को सुरक्षित रखने के लिए उन्होंने अपनी कृतियों में उसे उच्च एवं विशिष्ट स्थान प्रदान किया। समाज में नारी के विषय में प्रचलित अर्द्धसत्यों और मिथ्या धारणाओं के निवारण के लिए उन्होंने उसके गौरवमय रूप का चित्रण किया। उन्होंने समाज को अधोगति की ओर ले जाने वाली कुल के लिए कलंक स्वरूप तथा दुश्शीला नारी को अपने ग्रन्थों का आदर्श नहीं बनाया। अपितु पति की सहधर्मचारिणी, पति में सन्तोष एवं प्रसन्नता के लिए आत्मसुख की तिलांजलि देने वाली गुरूजन की सर्वात्मना शुश्रूषा करने वाली और सपत्नी के साथ सखीमय व्यवहार करने वाली त्यागमयी देवी रूपा नारी का चित्र खींचा है। इस प्रकार संस्कृत के प्रमुख नाटकों में स्त्री की उन्नत एवं आदर्श रूप को ही आधार माना गया है।

lgk;d xzFk& lph&

गुप्तकाल में नारी की स्थिति – श्रीमती अन्विता आनन्द – राधा पब्लिकेशन
संस्कृत नाटकों में सामाजिक चित्रण – चित्रा शर्मा – मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास
Indian Women Through the Ages - L.P. Thomas - Asia Publishing House
State of Society in Sanskrit Literature - Dr. R.D. Sharma Yuvraj Publication
Women in Sanskrit Drama - Ratnamayidevi Dikshit - Meherachand Lachmandas Delhi.

Copyright © 2017, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies